विकृत अर्थनीति और दुष्परिणाम

दिल्ली में शकरपुर में रहते हुए मुझे सात माह हो गये। मेरे निवास के दायीं ओर दो तीन फर्लांग के बाद झुग्गी झोपड़ी वाले लाखा लोग निवास करते हैं जिनके निवास स्थान का औसत प्रति व्यक्ति दस से पंद्रह वर्ग फुट है जिसमें सड़कें आर स्कूल शामिल है। मेरी बांई ओर दो फर्लांग पर ही बड़े–बड़े भवन हैं जिनका औसत दो सौ से ढाई सौ वर्ग फुट प्रति व्यक्ति है। सड़क स्कूल और पार्क को छोड़कर। सुप्रोम कोर्ट और हाई कोर्ट को इस बात की बहुत चिन्ता है कि दो सौ ढाई सौ वर्ग फुट भूमि एक व्यक्ति के स्वास्थ्य के लिए पर्याप्त नहीं है। अतः उसने व्यावसायिक गतिविधियां बन्द करने और अवैध निर्माण तोड़ने को प्रतिष्ठा का प्रश्न लिया है। उसने झुग्गी झोपड़ी वालों को भी हटान का आदेश दिया है। दोनों आदेशों का उद्येश्य है दिल्ली की भीड़–भाड़ कम करना जिससे सभ्य और सम्पन्न लोगों के लिए दिल्ली सुविधाजनक हो सके।

सुप्रीम कोर्ट ने दिल्ली की आबादी कम करने का प्रशासनिक समाधान खोजा जबकि यह किसी भी रूप में प्रशासनिक समस्या नहीं है। यह तो शुद्ध रूप में आर्थिक समस्या है। हमने स्वतंत्रता के बाद जो गलत अर्थनीति बनाई और जो अब तक उसी दिशा में चल रही है उसी का यह दुष्परिणाम है जो पूरे भारत में देख रहे हैं। चूंकि यह अर्थनीति के दुष्परिणाम है इसीलिए अर्थनीति संशोधित करने या बदलने से ही ठीक भी होंगे।

अर्थव्यवस्था को केन्द्र में रखकर हम विचार करें तो भारत की कुल आबादी के दो वर्ग हैं। पहला वे जो श्रम आधारित रोजगार, ग्रामीण परिवेश, मूल वस्तु उत्पादन में सक्रिय तथा मजबूरी में अक्षम श्रेणी का जीवन जी रहा है। दूसरा वे जो बुद्धि आधारित रोजगार, शहरी परिवेश, व्यवस्था या प्रसंस्कृत उत्पादन तथा सक्षम श्रेणी की सुविधा का जीवन जी रहा है। आदर्श अर्थव्यवस्था का लक्ष्य पहले वर्ग को दूसरे वर्ग की दिशा में ले जाना है। इसका लक्ष्य दोनों वर्गो की दूरी कम करते जाना भी है जिसके लिये पहले वर्ग को प्रोत्साहन और दूसरे को निरूत्साहित या निरपेक्ष रहना उचित है। किन्तु भारत की अर्थव्यवस्था ने पहले वर्ग को प्रोत्साहन देने की अपेक्षा दूसरे वर्ग को प्रोत्साहन देना शुरू किया। दोनों वर्ग के बीच असमानता बढ़ती चली गई। दूसरे वर्ग के प्रति पहले वर्ग के लोग भागकर दूसरे वर्ग में शामिल होने लगे। जो औरों से कुछ ज्यादा योग्य हैं वे दूसरे वर्ग में शामिल हो जाते हैं और जो नही हैं वे उसी वर्ग में पड़े रहते हैं।

यह सही है कि पहले वर्ग की संख्या घट रही है और दूसरे वर्ग की बढ़ रही है किन्तु ज्यों–ज्यों यह संख्या का अनुपात बदल रहा है त्यों–त्यों दूसरे वर्ग के समक्ष भी समस्याओं का अम्बार लग रहा है। क्योंकि दूसरे वर्ग की संख्या वृद्धि से उसकी प्राकृतिक सुविधाओं में कमी आ रही है। संख्या का परिवर्तन बिल्कुल स्पष्ट देखा जा सकता है। पहले वर्ग का एक श्रमिक एक सौ पचास रूपयें में श्रम प्रधान आजीविका की अपेक्षा एक सौ पचीस रूपयें की बुद्धि प्रधान आजीविका को अधिक महत्व देने लगा है। पहले वर्ग का व्यक्ति गांव के ग्रामीण परिवेश की अपेक्षा शहरी परिवेश में जीने के लिए भी छटपटा रहा है। शहरों की ओर निरंतर ग्रामीणों का पलायन दिख रहा है। मूल उत्पादन की अपेक्षा प्रसंस्कृत उद्योग या व्यवस्था में सक्रियता भी स्पष्ट दिख रही है। खेती के प्रति आकर्षण घट रहा है। लगातार खेती कम होती रहती है। खेती का सामान शहरों में आकर फिर प्रसंस्कृत रूप में वापस गांव की ओर जा रहा है। पूरी दिल्ली में मूल वस्तु उत्पादन लगभग नही के बराबर है। शहर के भीतर कोई खेती या खनिज उत्पादन नहीं है। फिर भी दिल्ली में रोजगार के अवसर अन्य क्षेत्रों की अपेक्षा इतने अधिक है कि पूरे देश से लोग भागे चले आ रहे हैं। इसी तरह पहले वर्ग के लोगों की संस्कृति भी बदल रही है। पहले वर्ग का व्यक्ति भी भोजन की गुणवत्ता पर खर्च की अपेक्षा टीवी, फोन आदि सुविधाओं को अधिक महत्व देने लगा है। सम्पूर्ण भारतीय जीवन पद्धति में मानवीय उर्जा की खपत घट रही है और कृत्रिम उर्जा की खपत बढ़ रही है। यदि दस वर्ष पूर्व भारत में प्रति वर्ष एक सौ यूनिट कृत्रिम उर्जा की खपत का औसत रहा होगा तो अब वह औसत प्रति व्यक्ति चार–पांच गुना तक बढ़ गया होगा। किन्तु मानवीय श्रम की औसत खपत तेजी से कम होती जा रही है। यह बेरोजगारी बढ़ने का एकमात्र कारण है।

यदि आर्थिक आधार पर वर्ग निर्माण करें तो उपरोक्त दो वर्ग ही बनने चाहिए थे। सभी आर्थिक समस्यों का न्यायपूर्ण समाधान पहले और दूसरे वर्ग की दूरी को कम करना था किन्तु दूसरे वर्ग के लोगों ने पहले वर्ग को भ्रम मे रखकर इस खाई को बढ़ाते रहने के कई मार्ग बना लिये।

1–श्रम शोषण के चार सिद्धान्त माने जाते हैं (क) कृत्रिम उर्जा मूल्य नियंत्रण के प्रयत्न (ख) श्रम मूल्य वृद्धि की शासकीय घोषणाएं (ग) शिक्षित बेरोजगारी दूर करने के प्रयत्न (घ) जातीय तथा अन्य आरक्षण। भारत में इन चारों पर पूरी ईमानदारी से काम हुआ जिसके परिणाम स्वरूप श्रम की मांग कम हुई तथा श्रम मूल्य वृद्धि पर विपरीत प्रभाव पड़ा।

2–पहले वर्ग को भ्रम में बनाये रखने के लिये असत्य को बार–बार दुहरा कर उसे सत्य सरोखा स्थापित कर दिया जाता है।

3–अस्पष्ट वर्ग बनाकर समस्याओं का समाधान करना शुरू कर दिया है। भारत का हर सक्रिय समाज शास्त्री, किसान, बेरोजगार, और गरीब के लिए बहुत चिन्तित है। बहुत लोग किसान के लिए बहुत चिन्तित हैं। किसान आत्महत्या कर रहा है इस बात की चर्चा तो आम हो गई है किन्तु इस बात का कोई समाधान नहीं हो पा रहा है क्योंकि किसान शब्द स्वयं में बहुत भ्रामक है। कृषि को लाभदायक होना चाहिये यह बात ठीक है किन्तु यह समस्या का पूरा–पूरा समाधान नहीं है क्योंकि ऐसी योजना का लाभ दूसरा वर्ग अधिक उठा लेगा। गरीब को भी राहत देने के प्रयत्न असफल हैं क्योंकि दूसरें वर्ग में भी बहुत लोग गरीब हैं जो गरीबी का जीवन जीने को तो तैयार हैं परन्तु श्रम करने को तैयार नहीं या शहर छोड़ने को तैयार नहीं।

इसलिये हमें ऐसी तकनीक विकसित करनी होगी कि पहले वर्ग के लोगों को पोत्साहन मिले। वर्तमान समय में पहले वर्ग के व्यक्तियों को प्रोत्साहन देने की परपंरा है जो पूरी तरह गलत है। मेरे विचार में व्यक्ति के स्थान पर वर्ग को प्रोत्साहित करे। यदि सौं लोग भूख हैं जिनकी भूख मिटानी है। यदि हमारे पास दस लोगों लायक भरपेट भोजन है तो दस को भरपेट भोजन कराकर नब्बे को छोड़ देने की अपेक्षा सबको आंशिक भोजन देना अधिक अच्छा होगा। पहले वर्ग के कुछ लोग प्रगति करके दूसरे वर्ग में शामिल हो सकें इसे अपनी सफलता मानने की अपेक्षा पहले वर्ग के सब लोग थोड़ा आगे बढ़े यह अधिक अच्छी सफलता होनी चाहिए। मेरे विचार में हमारी सोच ही गलत है।

अर्थशास्त्र का एक सामान्य सिद्धान्त है कि जिस वर्ग को प्रोत्साहित करना हो उसका ईंधन सस्ता होना चाहिए भले ही उपकरण महंगा हो जाय और जिस वर्ग को निरूत्साहित करना हो उसका महंगा हो भले ही उपकरण सस्ता हा जावे। पहले वर्ग का उपकरण है मानव श्रम और ईंधन है अनाज। दूसरे वर्ग का उपकरण है मशीन और इंधन है कृत्रिम उर्जा। वर्तमान समय में भारत में अनाज, कपड़ा, दवा आदि पर भारी कर लगते हैं।

धान पर छत्तीसगढ़ शासन ने चार प्रतिशत कर लगाया है। बीड़ी पत्ता पूरी तरह श्रम उत्पादित वस्तु है। मजदूर यदि एक सौ रूपये का बीड़ी पत्ता तोड़कर तैयार करता है तो उसमें से पच्चीस रूपया वाणिज्य कर विभाग, दो रूपये मंडी विभाग, पैंतीस रूपया वन विभाग तथा शेष तैंतालिस रूपये मजदूर को मिलता है। एक सौ रूपये में से सत्तावन रूपये शासकीय खजाने मे जमा होता है जबकि पत्ता पूरी तरह प्रथम वर्ग का उत्पादन है। होना तो यह चाहिए था कि प्रथम वर्ग के लिये अनाज कपड़ा, दवा आदि टैक्स फ्री तो होती ही अधिकतम सस्ती भी होती तथा उत्पादन मे से यदि शासन सुविधा नहीं देता तो कम से कम कटौती तो नहीं करता।

दूसरे वर्ग की मशीनों पर भारी कर लगाकर इंधन सस्ता किया जा रहा है। अभी–अभी टेलीफोन का मासिक किराया बढ़ाकर उसका उपयोग सस्ता करके एक रूपया पूरा भारत के नाम से शुरू किया गया। इंधन सस्ता होने से उसके उपयोग को प्रोत्साहन मिलता है। होना चाहिए था कि प्रथम वर्ग के सम्पूर्ण उत्पादन और उपभोग की वस्तुओं को कर मुक्त करके श्रम मूल्य वृद्धि के प्रयास करने का प्रयत्न करते। साथ ही दूसरे वर्ग के इंधन (कृत्रिम ऊर्जा) की भारी मूल्य वृद्धि करके उपकरण (गाड़ी, मशीन) को सस्ता करते। किन्तु हुआ विपरीत। इसी का परिणाम हुआ की भारत में पचास, वर्षो में आबादी तो तीन गुना बढ़ा किन्तु आवागमन सत्तर गुना बढ़ गया। आवागमन तथा कृत्रिम ऊर्जा की खपत तीव्र गति से बढ़ने के बाद भी कृत्रिम ऊर्जा के मूल्य में कोई असाधारण वृद्धि नहीं हुई है।

मेरा भारत के अर्थशास्त्रियों से एक सीधा प्रश्न ह कि साइकिल आम तौर पर प्रथम वर्ग के उपयोग की वस्तु है और रसोई गैस द्वितीय वर्ग के उपयोग की। भारत की प्रदेश और केन्द्र सरकारें साईकिल पर ढाई सौ रूपया प्रति साइकिल से अधिक कर लगाती है और रसोई गैस पर छूट देती है। इतना छोटा सा सवाल मेरे मन में बार–बार उठता है और मैं पूछता भी हूं लेकिन किसी अर्थशास्त्री ने मेरे इस प्रश्न को छुआ तक नही। दवा पर टैक्स लगाना हमारी क्या मजबूरी है? धान चावल जैसी वस्तुओं पर कर लगा तो आवाज क्यों नहीं उठती है? ग्रामीण परिवेश में उत्पादित वन उत्पादों पर इतना अधिक कर क्यों? बेचारे वन सम्पूर्ण विश्व का पर्यावरण ठीक करते हैं, पहले प्रकार के लोगों की जीविका के साधन हैं, ग्रामीण अर्थव्यवस्था को मजबूत करते हैं तो उन पर भारी कर लगाया जाता है। मैं जिस भी अर्थशास्त्री से पूछता हूं वहीं यह कहकर पल्ला झाड़ लेता है कि उसे साइकिल पर कर का पता नहीं है। मेरा प्रश्न है कि मेरे बताने के बाद उन्होंने इस संबंध में क्यों छानबीन नहीं की? या तो अब तक मेरी अच्छे अर्थशास्त्रियों से भेंट हुई या उन्हें ऐसे प्रश्नों से रूचि नहीं जो पहले वर्ग के पक्ष में हो।

मैं यह महसूस करता हूं कि भारत की आर्थिक समस्याओं समस्याओं का समाधान प्रशासनिक तोड़फोड़ नहीं है। ऐसी सभी समस्याओं का एक ही समाधान है कि पहले वर्ग का जीवन स्तर इतना सुधारे कि उनका दूसरे वर्ग की ओर पलायन रूके। जब तक श्रम की मांग और मूल्य नहीं बढ़ेगा तथा ग्रामीण अर्थव्यवस्था मजबूत नहीं होगो तब तक शहरों में शान्ति संभव नहीं होगी। झुग्गी–झोपड़ी रेहड़ी पटरी वालों पर बुल्डोजर चलाना और भवनों में तोड़फोड़ करके दिल्ली की आबादी घटाने की योजना इस समस्या को और बढ़ायेगी ही। अर्थव्यवस्था में आमूल चूल परिवर्तन करना होगा। दूसरे वर्ग के इंधन को महंगा और पहले वर्ग का इंधन अधिकतम सस्ता करना होगा। यदि आवश्यक हो तो रोटी–कपड़ा मकान दवा वनोत्पाद जैसे पहले वर्ग के उत्पादन और उपभोक्ता वस्तुओं को कर मुक्त करना ही होगा। भारत ने चालीस वर्ष साम्यवादी, समाजवादी षडयंत्र के अन्तर्गत पहले वर्ग का शोषण किया और अब पूंजीवादी षडयंत्र के अन्तर्गत हो रहा है। हमारा कर्तव्य है कि हम अब पहले वर्ग को दूसरे वर्ग के शोषण से बचाने के लिए भारत की अर्थनीति पर एक सार्थक और निर्णायक बहस छेड़ने की पहल करें।

संसदीय लोकतंत्र की रक्षा का अहम सवाल

ऐसा लगता है कि संसद में हंगामा करके दोनों ही बड़ी पार्टियां संसद को नाकारा साबित करने के चक्कर में हैं। ऐसा होना बहुत ही बुरा होगा इसलिए आज इस बात की जरूरत बहुत ज्यादा है कि सारा देश लोकतंत्र को बचाने के लिए लामबंद हो और कुछ ऐसी पार्टियां उनका नेतत्व करने के लिये आग आयें जो वास्तव में विदेशी आर्थिक हित साधने की बजाय जनता की पक्षधरता की राजनीति करती हों। इस बात में दो राय नहीं है कि संसदीय लोकतंत्र में बहुत सारी खामियां हैं लेकिन उससे बेहतर विकल्प अभी ईजाद नहीं हुआ है इसलिए एक देश के रूप में हमें अपने संसदीय लोकतंत्र की रक्षा करनी चाहिए।

जब पी वी नरसिम्हाराव के वित्त मंत्री के रूप में डॉ. मनमोहन सिंह ने अंधाधुंध निजीकरण की प्रक्रिया की बुनियाद डाली थी तो लोगों की समझ में नहीं आ रहा था कि अर्थशास्त्र का यह विद्वान वित्त मंत्री के अपने अवतार में करना क्या चाहता था। आजादी के बाद जो कुछ भी राष्ट्र की संपत्ति के रूप में बनाया गया था, उसे पूंजीपतियों के हाथ में सौंप देने की राजनीति शुरू हो चुकी थी। उसके पहले शासक वर्गों की पार्टियों ने बाबरी मस्जिद के विवाद के जरिये धार्मिक भावनाओं को खूब जबरदस्त तरीके से उभार दिया था और दोनों ही बड़ी पार्टियां यह सुनिश्चित कर चुकी थीं कि देश के अधिकांश आमजन हिन्दू या मुसलमान के रूप में अपनी अस्मिता की रक्षा के चक्कर में इतनी बुरी तरह से उलझ जायेंगे कि वे अपने राजनीतिक भविष्य के साथ खिलवाड कर रही राजनीतिक पार्टियों की चाल की बारीकियों को देखना बंद कर देंगे। यही हुआ भी। यह अलग बात है कि उस दौर में भी समझदार राजनेताओं का एक बड़ा वर्ग था जिसने संसद में और संसद के बाहर यह चेतावनी दी थी कि अगर मंदिर मस्जिद के चक्कर में देश का अवाम उलझा रहा तो देश की राजनीति का बहुत नुकसान हो जाएगा। ऐसे ही एक राजनेता मधु दंडवते थे। उन्होंने कहा कि मनमोहन सिंह की राजनीति देश के सार्वजनिक उद्योगों के मुनाफे का निजीकरण कर रही है और नुकसान का राष्ट्रीयकरण कर रही है। उन्हीं मधु दंडवते की याद में दिल्ली में एक सेमीनार में संसदीय लाकशाही के सामने मौजूद संकटों पर बातचीत हुई। समाजवादी चिन्तक मस्त राम कपूर और कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव सुधाकर रेड्डी मुख्य वक्ता थे, चर्चा के दौरान आज की हमारी राजनीति के संकट के बारे में खुलकर चर्चा हुई।

मस्त राम कपूर ने कहा कि आज की संसदीय राजनीति के सामने सबसे बड़ा संकट दल बदल कानून के कारण पैदा हुआ है। इस कानून ने भारतीय राजनीति से असहमति का अधिकार छीन लिया है। नतीजा यह है कि संसद और विधानसभा के सदस्यों के सामने पार्टी के व्हिप का मानने के अलावा कोई रास्ता नहीं बचा है। उन्होंने भारतीय राजनीति में दल बदल के कानून के इतिहास के बारे में भी कुछ जानकारी थी। भारत में दल बदल कानून की जरूरत 1967 में गैर कांग्रेस बाद की सफलता के बाद महसूस की गयी थी। जब कई राज्यों में विपक्षी दलों ने मिलजुलकर सरकारें बनाई थीं। आया राम और गया राम भारतीय राजनीति के नए मुहावरे बने थे। दल बदल पर रोक लगाने की जरूरत के मद्दे नजर सरकार को सुझाव देने के लिए तत्कालीन प्रधानमंत्री इंदिरा गांधी ने एक कमेटी बनायी जिसके प्रमुख जयप्रकाश नारायण थे। उस कमेटी मे अटल

बिहारी वाजपयी, मोरारजी देसाई और मधु लिमये भी थे। उस कमेटी ने सुझाव दिए जिनको कानून की शक्ल देकर दल बदल पर काबू किया जाना था, कमेटी के सुझावों में पार्टी के आलाकमान से असहमति के अधिकार को सुरक्षित रखा गया था। कमेटी ने अपनी रिपोर्ट में लिखा कि पार्टी के नेतृत्व से असहमति का अधिकार हर सदस्य के पास होना चाहिए। यही लोकतंत्र की जान है। अगर असहमति का अधिकार खत्म हो गया तो राजनीतिक पार्टियां मनमाने फैसले करने लगेंगी। इस कमेटी के सुझाव इंदिरा गांधी को सूट नहीं करते थे इसलिए उन्होंने उसे ठंडे बस्त में डाल दिया, लेकिन जब उनके हारने के बाद 1977 में मोरारजो देसाई ने सत्ता संभाली तो उन्होंने दल बदल विरोधी कानून बनाने की बात फिर शुरू कर दी। लेकिन ऐसा कानून बनाने की कोशिश की कि असहमति के अधिकार को खत्म कर देने की ताकत राजनीतिक पार्टियों के पास आ जाती। उन दिनों मधु लिमये जनता पार्टी के संसद सदस्य थे उन्होंने इस प्रस्तावित कानून का जबरदस्त विरोध किया और कानून पास नहीं हो सका।

उस दौर के कई बड़े लोगों ने मधु लिमये की आलोचना की और दल बदलुओं का सरदार भी कहा लेकिन मधु लिमये जिस सदन के सदस्य हों उसमें कोई भी सरकार मनमाने तरीके से लोकतंत्र विरोधी काम नहीं कर सकती थी। यह बात इंदिरा गांधी और जवाहर लाल नेहरू को भी मालूम थी। दल बदल कानून जनता पार्टी के समय में नहीं बन सका। लेकिन जब इंदिरा गांधी के मरने के बाद राजीव गांधी प्रधानमंत्री बने तो उन्होंने 30 जनवरी के दिन दलबदल कानून पास करवा लिया। और कहा गया कि महात्मा गांधी की शहादत के दिन कानून पास करवाकर सरकार ने उनके प्रति सही श्रद्धांजलि दी है। अजीब बात है कि उस दिन संसद में मधु दंडवते भी मौजूद थे और उन्होंने भी उसका समर्थन किया। जब शाम को वे मधु लिमये से मिलने गए तब उनकी समझ में आया कि कितनी बड़ी गलती कर चुके थे। उनको अफसोस भी हुआ लेकिन तब तक चिड़िया खेत चुग चुकी थी। मधु लिमये कहा करते थे कि अगर एक व्यवस्था कर दी जाए कि जो लोग दल बदल करेंगे उन्हें नयी पार्टी की सरकार में तब तक मंत्री नहीं बनाया जाएगा जब तक उस लोकसभा या विधान सभा का कार्यकाल खत्म न हो जाए। इसके अलावा उनकी सदस्यता से कोई भी छेड़छाड़ न करने की गारंटी भी सुनिश्चित की जाए। उन्हें लाभ का कोई भी पद न दिया जाए। अगर अगले चुनाव में वे अपनी नई पार्टी से जीतकर आते हैं तो उनको मंत्री भी बनाया जा सकता है और अन्य कोई भी पद दिया जा सकता है। देखा गया है कि ज्यादातर दल बदल मंत्री बनने की लालच में ही होते हैं। इसलिए अगर यह पक्का कर दिया जाए कि मंत्री नहीं बनना है तो केवल वे लोग ही दल बदल करेंगे जो सिद्धांतों के आधार पर कर रहे होंगे।

आज दल बदल कानून के चलते संसदीय पद्धति के लोकतंत्र का भारी नुकसान हो चुका है। शासक वर्गों की पार्टियों के आंतरिक लोकतंत्र को लगभग दफन किया जा चुका है और चारों तरफ चुनाव सुधारों की बात होने लगी है। इसी सेमीनार में कम्युनिस्ट पार्टी के महासचिव सुधाकर रेड्डी भी वक्ता थे। उन्होंने कहा कि भारत का संसदीय लोकतंत्र भारी संकट के दौर से गुजर रहा है। सत्ताधारी वर्गों की दोनों ही पार्टियां आम आदमी से कट चुकी हैं। संसद और विधानसभाओं में हंगामा होना आम बात हो गयी है। उन्होंने कहा कि जहां पहली लोक सभा के दौरान साल में 142 दिन काम होता था आज वहीं 45 दिन का औसत है और वह भी अक्सर हंगामे की भेंट चढ़ जाता है। संसद में 300 से ज्यादा लोग अरबपति हैं और वे आम आदमी के हित की बात नहीं करते। कांग्रेस और बीजेपी दोनों ही पार्टियों के भ्रष्टाचार के जलव आम हैं। इसीलिये आम आदमी अब यह मानने लगा है कि संसद या विधान सभाओं में उसके हित की बात नहीं की जायेगी। यह बहुत ही निराशा की बात है कि जनता का भरोसा संसद से उठ रहा है। अब लोगों को मालूम है कि संसद में उनका कोई काम नहीं हो रहा है। ऐसे हाल में लोग अपनी समस्याओं के हल के लिए सड़कों पर निकल रहे हैं। जनता को लगभग भरोसा हो चुका है कि संसद में पूंजीपतियों के लाभ के फैसले ही लिए जायेंगे। ऐसी हालत में कहीं को अन्ना हजारे, या अरविन्द केजरीवाल में जनता को उम्मीद नजर आती है और कहीं वामपंथी आतंकवाद का माहौल बन रहा है। यह सारे विकल्प राजनीतिक रूप से अधूरे हैं इनसे संसदीय लोकतंत्र का भला नहीं होने वाला है।

इसलिए जरूरी यह है कि हम एक राष्ट्र के रूप में एकजुट हों और अपने संसदीय लोकतंत्र की हिफाजत करें। ऐसा माहौल बनाया जाए जिसके बाद राजनीतिक फैसलों की बुनियाद आम आदमो के हित को ध्यान में रख कर डाली जाए, क्रोनी कैपिटलिज्म के आधार पर नहीं। आज विदेशी कंपनियों को सारा देश थमा देने की जो तैयारी हो रही है उसका विरोध अगर कारगर तरीके से न किया गया तो राष्ट्र की अस्मिता पर ही सवाल उठना शुरू हो जाएगा। इसको जनता का भरोसा जीतकर ही सम्भाला जा सकता है। आज भ्रष्टाचार का दानव इतना बड़ा हो चुका है कि अगर लोकतांत्रिक तरीके से उसके खिलाफ आंदोलन न शुरू कर दिए गए तो बहुत बुरा होगा।

1 तवलीन सिंह, प्रसिद्ध लेखिका, जनसत्ता, चार नवम्बर दो हजार बारह

बहुत हो गया। भ्रष्टाचार की बातें जरूरत से ज्यादा हो गई हैं। इतनी कि लगने लगा है कि भारत ही है दुनिया के देशों मे, जहां भ्रष्टाचार नाम की कोई चीज हो। यह झूठ है और समय आ गया है स्पष्ट शब्दो मे कहने का कि भ्रष्टाचार विरोधी आंदोलन बाधा बन गया है देश की प्रगति में। निजी तौर पर मैं अरविन्द केजरीवाल के तमाशों से इतनी तंग आ गई हूॅ कि जब कोई टी वी चैनल मुझे दावत देता है उनके नये खुलासे पर बोलने के लिये मै उनका नाम सुनते ही इनकार कर देती हूॅ । मेरी नजरो मे केजरीवाल इस देश की लोकतांत्रिक परंपराओं के दुश्मन है। मुझे विश्वास है कि अगर केजरीवाल और उनके वामपंथी साथियों को मौका मिलता है भारत की बागडोर संभालने का तो लोकतंत्र की खैर नहीं । सबूत चाहिये तो गौर कीजिए उनके तौर तरीकों पर। अण्णा हजारे को अलविदा कहने के बाद इनकी एक ही राजनीति रणनोति रही है कि हर दूसरे तीसरे हफ्ते प्रेस कांफ्रेन्स बुला कर इल्जाम लगाते हैं किसी व्यक्ति विशेष पर। अगर भारत सरकार का कोई मंत्री होता है तो फौरन उसके इस्तीफे की मांग शुरू हो जाती है। यानी अपराध साबित होने से पहले ही अपराधी करार दिया जाता है। यह न्याय नही अन्याय है और लोकतंत्र की नॉव का पत्थर मजबूत न्याय प्रणालो होती है। केजरीवाल या तो इस बात को समझ नही पाए है या समझना नही चाहते है।

रोज समाचार चैनल पर भ्रष्टाचार का तमाशा देख कर अब कई नए खिलाडी उतर आये है मैदान मे। इनमे है पूर्व सेनाध्यक्ष, जो आजकल कैमरा देखते ही बातें शुरू कर देते हैं सरकार के भ्रष्टाचार और नालायकी की । सवाल यह है कि उन्हे ये चीजें उस वक्त क्यो नही दिखी जब सेनाध्यक्ष थे? उस वक्त क्यो उन्होने एक ही लडाई लडी जो अपनो उम्र को एक वर्ष घटाने की थी, ताकि उनका शासन काल बढ जाए। जनरल साहब के अलावा भ्रष्टाचार विरोधी तमाशे मे आ गये है कई पूर्व अधिकारी और वरिष्ठ पुलिस अफसर। पूर्व सेनाध्यक्ष की तरह वे भी चुप्पी साधे रहे जब तक सरकारी मुलाजिम थे। ऐसा क्यों?

मेरे कहने का मतलब यह नही है कि इस देश मे भ्रष्टाचार नहीं है। जरूर है और बहुत बडी समस्या भी है, लेकिन अधिकतर पैदा हुआ है लाल फीताशाही के कारण, सरकारी कार्रवाई मे पादर्शिता न होने के कारण । तो अगर उधोगपति और विदेशी निवेशक रिश्वत देते है राजनेताओ और आला अधिकारियों को तो सिर्फ इसलिये कि ऐसा किये बगैर उनका कारोबार नही चलता।

इसका मतलब यह नहीं कि भारत का उधोग जगत बदमाशों और चोरो से भरा हुआ है। हमको गैरवान्वित होना चाहिये कि कई भारतीय उधोगपतियो ने देश का नाम रोशन किया है दुनियां के बाजारो मे । उनपर आरोप लगाना कि उन्होने अपना सारा धन अपने राजनीतिक दोस्तो से हाथ मिला कर, देश को लूट कर कमाया है, बेवकूफी है, झूठ है। राजनीतिक शक्ति से धन कमाना अगर देखना हो तो चीन जाकर क्यो नही थोडा विष्लेषण कर लेते केजरीवाल जैसे लोग?

पिछले कुछ महीनों मे अमरिकी अखबारो की खोजी पत्रकारिता के जरिये दुनिया को जानकारी मिली है कि चीन क सत्तर बडे राजनेताओ ने 2011 मे इतना पैसा बनाया कि अब सब अरबपति बन गये है। उनका कुल मिला कर धन 89.8 अरब डालर है। कैसे बने इतने धनी ये मार्क्स वादी राजनेता? क्योकि चीन मे किसकी हिम्मत है सवाल उठाने की? प्रधानमंत्री वेन जिआबाओ की दौलत पर जब न्यूयार्क टाइम्स म लेख छपा तो उस अखकार पर ऐसी पाबंदी लगी कि चीन के लोग उसे इंटर नेट पर भी नहीं देख सके। ब्लूमबर्ग के मुताबिक चीन के भावी राष्ट्रपति जी जिनपिंग करोडों की जायदाद के मालिक है। यानी चीन मे जो हमारे वामपंथी राजनेताओ के लिये आदर्श देश है, सिर्फ वे लोग अमीर बन सकते है जिनकी लंबी राजनीतिक पहुंच होती है।

सो अपने भ्रष्टाचार विरोधियों को मेरा सुझाव है कि वे कुछ दिनों के लिये चीन की यात्रा कर आएं ताकि उन्हे समझ मे आये कि जिन आर्थिक नीतियों को वे भारत पर थोपना चाहते है वे बाकी दुनियां मे बहुत पहल विफल हो चुकी है। यही कारण था कि चीन ने अपनी आर्थिक दिशा माओ स्ते तुंग के मरने के बाद बिल्कुल बदल डाली। यही वजह थी पूर्वी युरोप के मार्क्सवादी देशो की दिशा बदलने की जब सोवियत संघ इन्ही आर्थिक नीतियों के बोझ से टूट रहा था। भारत अब भी प्रगति की डगर पर चल रहा है तो सिर्फ इसलिये कि 1991 मे एक अति समझदार वितमंत्री ने दुनियां मे आर्थिक दिशाओं को बदलते देख कर हमारी अर्थव्यवस्था की दिशा बदल डाली।

अजीब बात है कि जो मध्यवर्ग इस परिवर्तन से पैदा हुआ है अब उस आथिक दिशा मे वापस जाना चाहता है, जिसे हमे मजबूर होकर बदलना पडा था। तो मेहरबानी करके केजरीवाल साहब , आप अपने साथियो को लेकर चीन की यात्रा पर निकल जाए ताकि भारत की अर्थव्यवस्था को बचाने का काम हो सके।

उत्तर– पहली बात तो यह है कि आपने टीम अरविन्द को मार्क्सवादी समझने की भूल की है। आपको ऐसा संदेह किस बात से हुआ । मार्क्सवाद सत्ता के केन्द्रीयकरण का पक्षधर है। वह अर्थव्यवस्था का सरकारी करण चाहता है। वह धर्म, समाज और व्यक्ति के अस्तित्व को अस्वीकार करता है। वह व्यक्ति के मूल अधिकारों को भी स्वीकार नही करता । कहां है मार्क्सवाद मे सूचना के अधिकार का कानून । मेरे विचार मे टीम अरविन्द के विचारो मे ऐसो कोइ बात नहीं । आंदोलन के पूर्व भटकते हुए यदा कदा विनायक सेन जैसे की प्रशंसा कर देना कोई मार्क्स वाद नही है। ग्राम सभा सशक्तिकरण राइट टू रिकाल ओर लोक पाल की मांग मे कहीं न मार्क्सवाद है न चीन का कोई अनुकरण।

भारत के कानूनो के अनुसार किसी संज्ञेय अपराध के प्रार्थमिक रिर्पोट होते ही अपराधी को संदेहास्पद मानकर उसकी जांच शुरू हो जाती है। कई बार तो उसे जांच पूर्व ही हिरासत मे ले लिया जाता है। किसी मंत्री के पास जो अधिकार है वे समाज की अमानत है जिन्हे समाज कभी भी वापस मांग सकता है। तवलीन जी को अधिकार और अमानत का अंतर समझना चाहिये। प्रशासनिक अधिकारी के अधिकार संवैाानिक होते है और राजनेता के अमानत । यदि राजनेताओ ने इसे अमानत नही समझा तो यह उनकी गल्ती है और ऐसी गल्ती को सही कहना तवलीन जी की गल्ती है । कोई सरकारी कर्मचारी को बिना कानून के नही हटाया जा सकता किन्तु किसी राजनेता से नैतिक आधार पर बिना सिद्ध अपराध के भी त्यागपत्र मांगा जा सकता है क्योकि वह समाज की अमानत है।

मै जनरल वी के सिंह आदि के आचरण की बात नही करता । फिर भी उन्हे किसी भ्रष्टाचार की पोल खोलने से इसलिये ही नही रोका जा सकता कि पूर्व मे सेनाध्यक्ष रहते हुए उनके कार्य ठीक नही थे।

भ्रष्टाचार यदि राजनेताओ का है तो अपराध, कर्मचारियो अधिकारियो का गैर कानूनी तथा उधोगपतियो का अनैतिक होता है। घूस देना आम तौर पर मजबरी होता है । इसलिये उधोग पतियों को सरकारी अफसरो या राजनेताओ की श्रेणी मे नही रखा जा सकता। रिलाइंस या जिन्दल का कार्य अनैतिक तो है ही। भले ही वह उस श्रेणी का न हो किन्तु समाज को इनकी जानकारी देना कोई गलत काम नही। समाज भी इन्हे उसी प्रकार देखता है। समाज पर जितना गंभीर प्रभाव वाड्रा राहुल गडकरी खुर्शीद की चर्चाओ का पडा उतना जिन्दल या रिलायंस का नही पडा। आगे और प्रभाव कम होना तब स्वाभाविक है जब तक किसी बडे स्थापित नेता की पोल न खुले। इसके लिये तवलीन जी को इतना परेशान नही होना चाहिये।

साम्यवाद भी मर चुका है और समाजवाद भी आखिरी सांस गिन रहा है। यदि कुछ वर्षो तक मनमोहन सिंह इसी तरह आगे बढते रहे तो साम्यवाद समाजवाद का नाम लेवा भी नही बचेगा। पंडित नेहरू जैसे लोगो के साथ स्टालिन की कब्र खोजने जैसी हालत बन सकती है। चिन्ता की कोई बात नही । मनमोहन सिंह को कोई खतरा नही। जहां अनेक धुरंधर केजरीवाल से मैदान मे लोट पोट दिख रहे है। वहीं मनमोहन सिंह कोल घोटाले के केजरीवाल से भी साफ बच निकले यह कोइ सामान्य घटना नहीं है। दो हजार चौदह तक मनमोहन सिंह है ही तब तक अर्थनीति और ठीक दिशा मे चली जायगी। उसके बाद चुनाव होंगे और चुनाव के बाद क्या होगा यह अभी कहना मुश्किल है। मेरे विचार से भाजपा या कांग्रेस को टक्कर देने के लिये अरविन्द केजरीवाल उपयुक्त व्यक्ति है।

2 श्री रविन्द्र जुगरान, झंडेवाला मंदिर नई दिल्ली

प्रश्न– भारत मे बंगला देशी मुसलमान चोरी छिपे आकर करोडो की संख्या मे फैल गये है। असम के कई जिलो मे तो वे निर्णायक स्थिति मे पहुंच चुके है। वे बंगला देशी असम के अलावा भी देश के अन्य भागो मे फैलते ही जा रहे है। कुछ सर्वेक्षणो के अनुसार ऐसे बंगला देशी मुसलमानो की संख्या पांच करोड के आस पास है किन्तु यदि हम कम भी करके माने तो ये पूरे भारत मे दो करोड से तो ज्यादा ही होंगे। ये सब योजनाबद्ध तरीके से बढ रहे है। पूरी दुनिया के मुसलमान इनकी प्रयत्न या परोक्ष सहायता किया करते है। सन सैतालीस मे इसी तरीके से इन्होने भारत का विभाजन कराया था । अब पुनः वही स्थिति आ रही है। असम के कई जिलो मे इन्होने मुस्लिम बहुमत बना भी लिया है। इस समस्या के प्रति भारत सरकार को जितना गंभीर होनी चाहिये उतनी वह नही है। यदि इसी प्रकार भारत के मुसलमानों की संख्या बढती रही तो भारत ओर विशेषकर हिन्दुओ के समक्ष गंभीर संकट हो सकता है।

उत्तर– आपने जो लिख वह पूरी तरह सच है। पूरी दुनिया मे इस्लाम ने अपने संगठित होने का भरपूर लाभ उठाया । हिन्दुत्व तो प्रारंभ से ही धर्म था। उसकी रग रग मे गुण प्रधान आचरण की छाप थी। वह कभी संगठन नही बन पाया और न ही उसने वैसी कोशिश की। बौद्ध, जैन आशिंक रूप से संगठन प्रधान राह पर चल। इसाइयत पचास प्रतिशत गुण प्रधान और पचास प्रतिशत संगठन प्रधान राह पर चली इस्लाम शत प्रतिशत संगठन बन गया। जिसने भी गुण को छोडकर संगठन का मार्ग पकडा वे सभी निरंतर लाभ मे रहे और हिन्दुत्व अकेला बचा जिसने भले ही कई सौ वर्षो की गुलामी झेल ली किन्तु गुण प्रधानता की राह नही छोडी । आज परिवर्तन का समय है।संगठन लगातार अविश्वसनीय हो रहे ह। गुणो का सम्मान बढ रहा है। हिन्दुत्व की आगे आने की बारी है। हिन्दुत्व को अपनी गुण पधानता पर गर्व है।

भारत के चार समूह ऐसे है जो समस्याओ के समाधान मे सबसे ज्यादा बाधक है। क्योकि उनके लिये उन समस्याओ का समाधान उनकी राजनैतिक महत्वकांक्षा मे बाधक है (1) साम्यवाद जो कभी नही चाहता कि आर्थिक असमानता घटे (2) समाजवादी जो कभी नही चाहते कि जातीय टकराव घटे (3) कांग्रेस जो कभी नही चाहती कि सत्ता कि सत्ता विकेन्द्रित हो और (4) संघ परिवार जो कभी नही चाहता कि भारत मे कभी हिन्दुत्व मजबूत हो । यदि भारत मे स्वतः ही हिन्दुत्व मजबूत हुआ तो संघ परिवार की राजनैतिक इच्छाओ की अकाल मौत संभव है। यही कारण है कि संघ परिवार भी अन्य राजनैतिक दलो की तरह समाज मे दो तरफा प्रयत्न जारी रखता है अर्थात समस्या को लगातार जीवित भी रखा जाए और चर्चा मे भी किन्तु समस्या का कोई समाधान न होने दिया जाय।

संघ परिवार चाहताहै कि हिन्दुओ की साम्प्रदायिक भावना को उभारकर उनके वोट इकठ्ठे किये जाए। कांग्रेस सहित अन्य दल जानत है कि हिन्दू कभी इकठ्ठा होंगा नही। इसलिये मुसलमानो की भावनाएं उभारकर उनके वोट इकठ्ठे करें। दोनो गुट भावनाओं को भडकाकर अपनी राजनीति चमकाना चाहते है। दोनो ही समस्या का समाधान नहीं चाहते।

आम तौर पर लेखकों की आदत होती है कि वे सत्य को बढा चढा कर अविश्वसनीय बना देते है। उन्हे लगता है कि वे समस्या को गंभीर बना रहे है। किन्तु होता है उल्टा। भावनाएं अल्पकालीन प्रभाव छोडती है और विचार दीर्घ कालीन। विचार स्पष्ट है कि बंगलादेशी मुसलमान भारत मे चोरी छिपे घुसकर यहां की आबादी का संतुलन बिगाड रहे है। वे आबादी बढाकर खतरनाक सिद्ध होगे किन्तु आपने दो करोड या पांच करोड लिखकर अपना वैचारिक पक्ष कमजोर कर दिया। सन उन्नीस सौ इकसठ मे भारत मे मुसलमानो की कुल आबादी चार करोड सत्तर लाख थी। यदि उनकी आबादी पूरे भारत की आबादी के समान ही बढती तो उसे करीब साढे दस करोड होना था जो दो हजार एक मे साढे तेरह करोड हुई अर्थात स्वाभाविक से तीन करोड ज्यादा। आप भी जानते है कि मुसलमान हिन्दू की अपेक्षा कई गुना अधिक संतान पैदा करते है। इस आबादी मे पश्चिम पाकिस्तान से भी मुसलमान आकर जुडे ओर कश्मीर से भी । यदि बंगला देश से ही तीन या पांच करोड मान ले तो यह तर्क गले नही उतरता । यदि हम माने कि एक करोड आये तब भी विषय की गंभीरता कम नही होती। बात को बढा चढा कर असत्य बनाना ठीक नहीं।

यह भी विचारणीय है कि भारत मे वर्तमान ग्यारह समस्याओ मे से यह समस्या कितनी प्राथमिक है तथा कितनी तात्कालिक है? पूरे भारत मे अपराधियो का प्रतिशत खतरनाक स्थिति तक बढ रहा है। पहले शराफत से सुरक्षा की चिन्ता करे या मुसलमानो की? यदि शराफत ही नही रही तो न हिन्दुत्व बचेगा न इस्लाम । अतः सभी विषयो पर चिन्ता करते रहने की जरूरत है जिसमे मुसलमानो की समस्या सबसे उपर नही ।

फिर भी आपकी चिन्ता विचारणीय है । यदि संघ परिवार इसी तरह वोटो के लालच मे आत्मघाती लाइन पर चलता रहा तो भारत का दुबारा विभाजन हो भी सकता है। आवश्यकता यह है कि संघ परिवार हिन्दुत्व की कीमत पर अपनी राजनैतिक इच्छाओ का बलिदान करे। अन्यथा हम लोग ही पहल करके संघ परिवार को यह इच्छा छोडने को मजबूर कर दे।

3 प्रो0 एन आर लबाना इन्दौर म0प्र0

विचार–

श्री छवील सिंह उपाध्यक्ष व्यवस्था परिवर्तन मंच ने चुनाव आयुक्त को पत्र लिखकर राष्ट्रपति, प्रधानमंत्री और मुख्य मंत्रियों का चुनाव सीधे जनता द्वारा कराने की मांग की है जो उचित है किन्त मेरे विचार से यह संसदीय प्रणाली मे तो संभव नहीं है। राष्ट्रपति और राज्यपालों का चुनाव सीधे जनता द्वारा तभी कराया जा सकता है जब हम अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली को अपनाकर अध्यक्षात्मक प्रणाली तभी लागू हो सकती है जब संविधान मे संशोधन किया जाए। किन्तु संविधान मे ऐसा संशोधन नही किया जा सकता है क्योकि केशवनांद भारती के मामले मे सर्वोच्च न्यायालय ने संसदोय प्रजातंत्र को संविधान का मूल ढाचां मान लिया है और संसद पर रोक लगा दी है कि वह संविधान के मूल ढाचे मे परिवर्तन नही कर सकती है। यदि प्रारंभ से ही अध्यक्षात्मक संघात्मक प्रजातंत्र अपना लिया होता तो आज हमारा देश विकसित राष्ट्र होता क्योकि हमारी संसदीय शासन प्रणाली बार बार के होने वाले मध्यावधि चुनावो और विधायको एंव सांसदो की खरीद फरोक्त मे होने वाली बर्बादी से बचा जा सकता था।

हमारे संसदीय प्रजातंत्र मे कार्यपालिका का निर्माण विधानपालिका के बहुमत दल से होता है। इसलिये विधानपालिका मे बहुमत लाने के लिये निर्वाचनो मे भारी भ्रष्टाचार और धन खर्च किया जाता है।

अध्यक्षात्मक शासन प्रणाली से ऐसे खर्चो से बचा जा सकता है। संसदीय प्रणाली इग्लैड के लिये ठीक हो सकती है क्योकि वह छोटा देश है और एकात्मक शासन है। भारत के लिये तो अध्यक्षात्मक प्रणाली ही उचित है किन्तु यह तभी हो सकता है जब सर्वोच्च न्यायालय अपने पूर्व के निर्णय मे संशोधन कर दे। वैसे भी हमारे यहां अध्यक्षात्मक प्रणाली की कई विशेषताएं अपनाए जाने लगी है। उदाहरण के लिये मिलो जुली सरकार बनना और प्रधानमंत्री या मुख्य मंत्री की पूर्व घोषणा कर उसके नेतृत्व मे चुनाव लडना तो अध्यक्षात्मक प्रणाली मे ही देश का हित है। इससे संसद मे हंगामे होने की नौबत नही आयगी। नियंत्रण और संतुलन का सिद्धान्त ठीक से लागु होगा।

उत्तर– मेरे विचार मे न्यायालय ने मूल ढांचा अब तक परिभाषित नही किया है। फिर भी संसदीय या अध्यक्षीय प्रणाली वर्तमान समस्याआ का समाधान नहीं है। राजनेताओ की नीयत खराब है। खराब नीयत वालो को किसी प्रणाली मे सुधार से ठीक नही किया जा सकता । उनके अधिकारों मे कटौती ही उनका न्यूशेंस वैल्यु घटा सकती है और लोक संसद उनके अधिकारों मे कटौती का एक चरण हो सकता है। इस पर अपनी राय दे।

4 तवलीन सिंह वरिष्ठ पत्रकार

जन सत्ता 21 अक्टूबर 2012 । अगर आपको लगने लगा है कि पिछले कुछ महिनो से भारतीय राजनीति तमाशा बन गई है तो आप अकेले नहीं है। न आप गलत सोच रहे है। औपचारिक तौर पर तो भारत आज संसदीय लोकतंत्र के नियमो पर चल रहा है लेकिन राजनीतिक प्राथतिकताएं और राजनीतिक फैसले किये जा रहे है सडकों पर । यहां सफेद टोपियों वाले आम आदमी साबित करने की कोशिश कर रहे है कि इस देश की हर समस्या का समाधान है राजनेताओ का सरेबाजार सूली पर लटकाना। उनकी मदद कर रहे है जाने माने टीवो एंकर जिन्हे राजनीतिक पत्रकारिता की समझ सिर्फ इतनी है कि रोज शाम को तथाकथित पंडितों को स्टूडियो मे बुलाकर अरविन्द केजरीवाल के नये शिकार पर चर्चा करवाते ह। केजरीवाल साहब ने पिछले दिनो राजनेताओ और उनके रिश्तेदारो को निशाना बनाया कि टी वी पत्रकारो के पास तहकीकात करने की फुर्सत नही रही है। सो हप्ते हप्ते सुना देते है वही इल्जाम जो केजरीवाल और उनके साथी लगाते फिरते है। उपर से अगर राजनीतिक बहस हो रही ह तो सिर्फ टी वी चैनल पर। सो मुश्किल होता जा रहा है भारतीय राजनीति को गंभीरता से लेना और याद रखना कि देश गंभीर आर्थिक मंदी के दौर से गुजर रहा है।

यह नौबत आई कैसे । इस सवाल का जबाब ढुढना मुश्किल नही है। वर्तमान सरकार ने 2009 के बाद जितना काम किया है लोक तांत्रिक संस्थाओ को कमजोर करने का शायद ही किसी दूसरी सरकार ने किया होगा । पहले प्रधान मंत्री को कमजोर किया सोनिया गांधी ने यह स्पष्ट करके कि अपने प्रधान मंत्री अपने मंत्रि मंडल मे किसी व्यक्ति को शामिल तक नही कर सकते है सोनिया जी की मर्जी के बिना। फिर सोनिया जी ने अपनी राष्ट्रीय सलाहकार समिति , एन ए सी को इतना शक्तिशाली बनाया कि मंत्रियो पर हुकुम चलाने लगे एन ए सी के सलाहकार। नतीजा वही हुआ जो होना था। कमजोर हो गइ भारत सरकार। जहां तक संसद को कमजोर करने की बात है वहां हर लोकतांत्रिक दल का योगदान रहा है। संसद की गरिमा तब से कम होने लगी जब से परिवार वाद शुरू हुआ है। इस राजनीतिक परंपरा को शुरू किया कांग्रेस पार्टी ने लेकिन अब इसे अपना लिया है सारे राजनीतिक दलो ने। इस परंपरा के तरह चुनाव लडने की टिकट उन्ही को मिलनी है जिनकी किसी ताकतवर राजनेता से करीबी रिस्तेदारी हो या जिनकी पहुच उपर तक हो। आम आदमी के लिये राजनीति मे आने के दरवाजे तकरीबन बंद हो गये है। और जो आक्रोश दिखता है मध्यम वर्गीय भारतीयो मे वह इसी से पैदा हुआ है। इस आक्रोश का लाभ मिला है केजरीवाल साहब को। मुश्किल यह है कि जिस दिशा मे केजरीवाल साहब देश को ले जाना चाहते है उसमे हमारी आर्थिक राजनीतिक समस्याओ का कोई समाधान नही दिखता। जैसे राजनीति को उतार लाये है सडको पर वैसे ही वह आर्थिक फैसले भी करवाना चाहते है सडको पर। आम आदमी की सहमति से केजरीवाल और उसके साथी नादान है। अब तक समझ गये होते कि लोकतात्रिक प्रणाली का दस्तूर संसद और विधान सभाओ के माध्यम से जनता की मर्जी जाहिर करवाना है। बाजारो मे या ग्राम सभाओ मे अगर महत्वपूर्ण नीतियां बनने लगी तो भारत का भविष्य अंधकार मय है। केजरीवाल के नये राजनीतिक दल का दृष्टिपत्र पढने के बाद मुझे चिन्ता और होने लगी है । क्योकि मुझे एक भी नया राजनीतिक या आर्थिक विचार ढूढने पर नही मिला।

केजरीवाल के विचारो का खंडन करने के लिये वरिष्ठ राजनेता सामने आने चाहिये। लेकिन सब के सब इन दिनो डर के मारे चुप बैठे है । मख्य विपझी दल होने के नाते कुछ जिम्मेदारी भाजपा की होनी चाहिये थी केजरीवाल को आडे हाथ लेने की । विपक्ष मे उनकी भूमिका इतनी निकम्मी रही है कि भ्रष्टाचारका मुद्दा भाजपा के नेताओ ने तभी उठाया जब अन्ना हजारे का आंदोलन शुरू हुआ। फिर बाबा रामदेव पहुचे दिल्लो के रामलीला मैदान मे भ्रष्टाचार के खिलाफ आवाज उठाने। उनके भी पीछे भागने लग गये भाजपा के वरिष्ठ नेता। राजनीति के रंग मंच से मुख्य पात्र गायब हो गये तो उनकी जगह ले ली केजरीवाल ने और उनके साथियो ने जो बडी चतुराई और समाचार चैनल की मदद से अपना चुनाव प्रचार शुरू कर चुके हैं । शायद ही कोई राजनीतिक दल रहा होगा जिसे मुफ्त मे इतने सारे प्रचार के साधन मिले हो। केजरीवाल और उनके साथियो ने बार बार स्पष्ट किया है कि वो अपने आप को अलग किस्म के राजनीतिज्ञ मानते है। यानि उन्ही का अधिकार है इमानदारी पर। उन्ही को चिन्ता ह भारत के आम आदमी की। अफसोस की बात ता यह है कि एक भी वरिष्ठ टी वी ऐंकर ने उनस पूछने की जरूरत नही समझी है कि ऐसी बातें कैसे करते है इतने विश्वास से । नही किसी को केजरीवाल साहब के आत्म विश्वास से तानाशाही की बू आई है। इतिहास गवाह है कि हर तानाशाह ने आम आदमी का नाम लेकर अपने तानाशाही राजनीति की नीव रखी है।

उत्तर– आप एक गंभीर लेखक मानी जाती है। किन्तु प्रस्तुत लेख मे आपकी गंभीरता का अभाव दिखा । आपको केजरीवाल और उनकी टीम के गुण दोषो की समीक्षा करनी चाहिये। किन्तु आपने समीक्षा की सीमाएं तोडकर उनकी आलोचना शुरू कर दी । सच बात यह है कि देश आथिक मंदी से नही गुजर रहा है। बल्कि राजनैतिक संकट से गुजर रहा है। यदि संसद आर्थिक मामलो मे कोई निर्णय नही करेगी तो उसके प्रभाव आर्थिक संकट के रूप मे दिखेगा ही । पिछले दो वर्षो से अल्प मत सरकार होने के कारण भिन्न भिन्न प्रादेशिक नेताओ ने केन्द्र सरकार को

अधिकतम व्लैक मेल किया । ममता बनर्जी ने तो सारी सीमाएं तोडकर रख दी। आर्थिक संकट इसका परिणाम है कोई विदेशी या प्राकृतिक संकट का परिणाम नही। इसलिये चर्चा राजनैतिक संकट के समाधान की ही होनी चाहिये।

अरविन्द केजरीवाल ने उस राजनैतिक जडता को तोडने की कोशिश की है जा विभिन्न राजनैतिक दलो ने संसद पर कब्जा करके देश की सामाजिक व्यवस्था को गुलाम बनाकर रखा । आज किसी राजनैतिक दल मे अरविन्द केजरीवाल और मीडिया से आंख मिलाने की हिम्मत नही है तो उसका कारण केजरीवाल न होकर ये राजनैतिक दल ही है जिन्होने संसद और संसदीय व्यवस्था को लूट का माध्यम बनाया। ऐसी अविश्वसनीय राजनैतिक व्यवस्था को विश्वसनीय चुनौती देने के कारण ही आज अरविन्द केजरीवाल उभरकर सामने आये है जिसका समाधान या तो राजनैतिक दलो की व्यवस्था परिवर्तन के मार्ग पर चलने से होगा अथवा जनता के द्वारा रिजेक्ट हो जाने से ।

मनमोहन सिंह सरीखे शरीफ आदमी को कठपुतली बनाकर मनमाने निर्णय लेने का जो पाप सोनियां परिवार ने किया है उसका परिणाम तो उन्हे भुगतना ही होगा । सुषमा स्वराज्य और गडकरी जैसे लोगो ने कांग्रेस पार्टी से गुपचुप समझौता करके जिस तरह मनमोहन सिंह पर आक्रमण किया उसका जबाब तो जनता के समक्ष देना ही होगा । यह अलग बात है कि जबाब मागने का माध्यम मनमोहन सिंह न होकर अरविन्द केजरीवाल है। मै मानता हूॅ कि अरविन्द केजरीवाल और उनके दल के पास वर्तमान समस्याओ का ठीक ठीक समाधान नही है किन्तु वर्तमान जडता को तोडकर नये की खोज करने से कोई नया संकट नही आने वाला है। यदि अरविन्द केजरीवाल भी आगे आते है तो वर्तमान राजनैतिक व्यवस्था की अपेक्षा कोई अधिक बुरा होने वाला नही हैं। आपने बचकाना प्रश्न उठाया कि क्या ग्राम सभाए राष्ट्रीय मामलो पर नीति बनाएगी। आपका स्वयं उत्तर देना चाहिये कि क्या ग्राम सभाओ के मामले मे संसद नीति बनाएगी। यदि संसद गलत मार्ग पर जाएगी तो उसे ठीक करने का काम आम जनता का है । ग्राम सभा तो आम जनता से उपर है । मै नही समझता कि आपने ग्राम सभाओ का मजाक उडाकर क्या कहना चाहा है। मै स्पष्ट कर दू कि यदि हमारे राजनेता संसद को कब्जे मे करके इसी प्रकार मनमानी करते रहे और जनता को कोई विकल्प नही दिखा तो जनता हर समस्या का समाधान मान लेगी राजनेताओ को सरे बाजार सूली पर लटकाना । पिछले वर्ष ही लीविया आदि कई देशो मे यह देखने को मिल चुका है । भारत मे अभी वैसी स्थिति नही आई है। क्योकि यहां लोक तंत्र है और जनता को वोट द्वारा राजनेताओ को सूली पर लटकाने का अधिकार प्राप्त है। यदि पक्ष विपक्ष के नाम पर बने एक राजनैतिक गिरोह को तोडने का काम अरविन्द केजरीवाल तथा मडिया ने उठाया हे तो उसकी प्रशंसा की जानी चाहिये या समीक्षा की जानी चाहिये न कि एक पक्षीय आलोचना ।

5 श्री किशोर चौधरी, गजा सराय, नालंदा, बिहार

प्रश्न– कोल ब्लाक आवंटन का आरोप लगने पर मनमोहन सिंह को स्वेच्छा से स्तीफा देना चाहिये था या नही? जबकि इस सिलसिले मे विपक्ष द्वारा संदन को बाधित किया गया। पिछले कुछ उदाहरण मे श्री लाल बहादूर शास्त्री ने रेल दर्घटना पर रेल मंत्री पद छोड दिया था। श्री लाल कृष्ण आडवाणी का बाबरी मस्जिद ढहने के आरोप पर गृहमंत्रालय से त्यागपत्र देना पडा था। उमा भारती को भी म0 प्र0 के मुख्य मंत्री पद से स्तीफा देना पडा था। जो बाद मे उक्त पद से वेदखल भी हो गई थी। जबकि इसी के नेतृत्व मे चुनाव लडा गया था और बहुमत की सरकार बनी थी और भी कई उदाहरण होगे परन्तु मनमोहन सिंह द्वारा नैतिक जिम्मेवारी लेकर स्तीफा नही दिया गया। इनमे मंत्रीमंडल के एक दो सदस्य ने भी तर्क वितर्क दिये है जो मान्य नही है। एक वैधानिक संस्था के रिर्पोट को कठ दलेली गलत कहना कहां तक ठीक है। आप द्वारा मात्र राहुल गांधी के विरोध मे कहना क्या ठीक है?

उत्तर– आपने पद छोडने के तीन उदाहरण देकर मनमोहन सिंह द्वारा नैतिक आधार पर त्यागपत्र की मांग की। लाल बहादुर शास्त्री ने रेल दुर्घटना का नैतिक दायित्व लेते हुए त्यागपत्र देकर नैतिकता का जो अति उच्च मापदण्ड बनाया था वह आगे बढाने के लिये व्यक्ति का व्यक्तिगत निर्णय तो हो सकता किन्तु इस आधार पर त्यागपत्र की सलाह उचित नही। यदि शास्त्री जी के कदम को एक नैतिक मापदण्ड मान लिया जायगा ता सारी राजनैतिक व्यवस्था ही ध्वस्त हो जायगी। रेल दुर्घटना के लिये त्यागपत्र देना न उचित था न है।

आडवाणी जी ने गृहमंत्री रहते हुए बाबरी मस्जिद विध्वंस करने वाले आधार पर त्यागपत्र दिया वह उचित था क्योकि बाबरी मस्जिद विध्वंस करने वाले उनके अपने ही लोग थे जिन्होने उन्हे धोखा दिया। आडवाणी जी गृहमंत्री रहते हुए अपनो से धोखा खा गये यह नैतिकता का प्रश्न था। उमा भारती का मामला न्यायालयीन था । किन्त मनमोहन सिंह का मामला इन तीनो से अलग है। मनमोहन सिंह स्वयं कोल ब्लाक की नीलामी के पक्ष मे थे किन्तु उनकी इच्छा को अन्य संवैधानिक इकाइयों ने ठुकरा दिया। उस समय एक प्रक्रिया चल रही थी जिसे मनमोहन सिंह बदलना चाहते थे तथा अन्य लोग रखना चाहते थे। सी ए जी ने कहा है कि मनमोहन सिंह की सलाह मान ली जाती तो देश का इतने लाख करोड का फायदा होता । पता नही इसमें मनमोहन सिंह की अनैतिकता और नीलामी के विरूद्ध सलाह देने वालो की नैतिकता कहा से आ गई। स्पष्ट दिखता है कि आप जैसे लोग जो राहुल गांधी को प्रधानमंत्री बनाने के लिये उतावले है या कुछ विपक्षी दलो के लोग जो मनमोहन सिंह की इमानदारी से भयभीत है ऐसे लोगो द्वारा प्रधान मंत्री मनमोहन सिंह से त्यागपत्र मांगने मे कौन सी नैतिकता का भाव छिपा है यह मुझे भी समझना पडेगा।

सीएजी एक संवैधानिक संस्था है। सरकार भी एक संवैधानिक संस्था है। दो संवैधानिक संस्थाओ के बीच यदि टकराव हो तो दोनो की विश्वसनीयता पर समाज मे बहस छिडतो है न कि कोई एक मान ली जाती है। सीए जी के भ्रष्टाचार संबंधी निष्कर्ष न्यायालय तक गये और कार्यवाही जारी है। नुकसान संबंधी निष्कर्ष निकालने मे सी ए जी ने अपनी सीमाएं तोडी है। यदि सी ए जी प्रचार लोभ मे नहीं पडता तो अच्छा होता ं अकल्पनीय अनुमानो ने सरकार के साथ साथ सी एजी की भी विश्वसनीयता घटाई है। यदि पौने दो लाख करोड का अविश्वसनीय आकडा न बनाकर यदि चालीस हजार करोड भी नुकसान का आकडा होता तो राजनेताओ को कम नुकसान भी नही होता और सी एजी आसानी से प्रमाणित भी कर देते। सी ए जी ने अनावश्यक राजनेताओ को अविश्वसनीयं सिद्ध करने का अवसर दे दिया। सोनिया गांधी और सुषमा स्वराज की मिली जुली तिकडम ने मनमोहन सिंह को और ज्यादा मजबूत कर दिया है। अब नये चुनाव तक मनमोहन सिंह से त्यागपत्र मांगना मांगने वालों की विश्वसनीयता ही कम करता है।

6 श्री ओम प्रकाश पांडेय मंजुल, भोजीपुरा बरेली

ज्ञान तत्व के सभी अंक नियमित रूप से मिलते आ रहे है जिनमे भरे नवनीत का सेवन कर स्वास्थ संवर्धन का सौभाग्य प्राप्त हो रहा है।

रामानुजगंज मे सम्पन्न 10 सितम्बर से 23 सितम्बर तक चले आपके ज्ञान शिविर मे आपक द्वारा फोन से आमन्त्रण प्राप्त होने के उपरान्त भी परिस्थिति वश मै आपके दर्शन एंव अमृतोपदेश के श्रवण हेतु न पहुंच सका। इसका मुझे दुख है। (इतनी दूर की यात्रा के लिये मै एक साथी तलाशता रहा पर कोई भी साथी न मिल सका फलतः मुझे यात्रा का विचार छोडना पडा। यात्रा का योग संयोग देखिये कि गुजरात महाराष्ट राजस्थान तथा गोआ इत्यादि के लिये मुझ सहिंता 14 साथी हो गये थे । इन प्रान्तो के विभिन्न दर्शनीय एंव पूजनीय स्थलो का दर्शन भ्रमण कर 11 दिनो बाद 31.10.12 को लौटा हूॅ।

16 से 31 अक्टूबर 12 वाले 255 वे अंक मे शिविर मे संपादित तिथिवार कार्यक्रमो की झलक देखी । मन को समझाने के लिये यह अति संक्षिप्त झाकी काफी हो सकती है पर मन को भरने के लिये तो उट के मुंह मे जीरा जैसी ही है। मन तो तभी भरता जब रामानुजगंज मे सशरीर उपस्थित रह कर कार्यक्रमो का साक्षी रहा होता । अलबत्ता मन भरा नही है तो मरा भी नही है। जो लब्ध हुआ उससे संतोष कर रहा हूॅ।

प्रस्तुत अंक मे यह पढकर अतीव अच्छा लगा कि 57 वर्षो के लम्बे मनीषी जीवन मे आपने गरल सुधारिपु कर हि मिताई को चरितार्थ किया । लूट और हत्या के प्रयत्न जैसे गंभीर आरोप लगाने वाले भी आपसे सामान्य संबंध भाव रखते है। यह आपकी व्यवहार शीलता एंव आपके व्यक्तित्व के चुम्बकत्व को तो दर्शाता ही है । आपका लाइफ लाइन अचीवमेंट भी है । आपकी दूरदर्शिता की भी भूरि भूरि प्रशंसा करनी चाहिये। जिससे प्रेरित होकर आपने अपने सारे कार्य प्रभार समय रहते नयी टीम के बलिष्ठ कंधो पर रख छोडे है। जो लोग ऐसी दूरदर्शिता का परिचय नही देते वे कितने ही महान विद्वान हो उनकी विचार धारा एक न एक दिन धरातल मे असमय विलीन हो जाती है तथापि आप शंताधिक वर्षो तक लोक नियंत्रित तंत्र अभियान को मार्ग दर्शन देते रहेंगे । ऐसी मेरी कामना है भावना है और प्रभु से प्रार्थना है। ?

बहुत ही विन्रमता से कहना चाहता हूॅ कि ज्ञान तत्व के अंक मे वेश्या के लिये वैश्या छपता रहा है वैश्या तो वैश्य की पत्नी को कहते हैं रंडी को वेश्या ही लिखे छापे व पढे। मे आपकी विवशता अनुभव कर सकता हूॅ कि एक ही आदमी सब कुछ कहां तक देखे। इसी अंके के पृष्ठ 19 पर दो तपोनिष्ठो एंवं विद्वानो मे कर कमलो का प्रयोग हुआ है मेरा मत ह कि कर कमल केवल भगवान के होते है इंसान के नही।

उत्तर– ज्ञात तत्व के अंक आपको मिलते रहते है यह जानकर खुशी हुई । वैश्या और वेश्या शब्द का गंभीर अंतर तथा कर कमल शब्द का अर्थ आपने बताया। मैने अपने कार्यकर्ताओ को सतर्क किया है कि वे भाषा संबंधी और सतर्कता रखे।

7 श्री कैलाश विहारी श्रीवास्तव शहजादे कोठी, रायबरेली उत्तर प्रदेश

विचार –अमर उजाला 22/10 मे किरण वेदी जी ने लेख लिखकर अपनी पीडा व्यक्त की है कि आज किस प्राकर राजनीतिज्ञ अपने अधीनस्थ कर्मचारियों पर तबादलो की तलवर लडकाकर उनका मनोबल तोडते है। हरियाणा के आई ए एस अशोक खेमका उसके प्रत्यक्ष उदाहरण है । उनकी हिम्मत भी प्रशंसनीय है अन्यथा आज तो चंद वेइमान डरपोक नपुंसक अधिकारी कर्मचारी राजनेताओ केसाथ मिलकर अपनी भी विश्वसनीयता समाप्त कर रहे है और देश को भी नुकसान कर रहे है। मध्य प्रदेश के अफसरो पर पडे छापे इसके स्पष्ट प्रमाण है। उत्तर प्रदेश भी कोई पीछे नही रह गया है। अखिलेश यादव से बहुत कुछ उम्मीदे थी किन्तु नवजवान भी बुजुर्ग नेताओ से घिरकर उसी मार्ग पर चलने लगा।

मेरी अब भी मान्यता है कि यदि आई ए एस आई पी एस एक जुट हो जावे तो देश की आधी समस्याएं हल हो सकती है। आज भी यह वर्ग अन्य वर्गो की तुलना मे ज्यादा इमानदार है।

उत्तर– मै आपके सुझाव से आंशिक रूप से ही सहमत हूॅ ।राजनीतिज्ञ जनता के प्रति सीधे उत्तरदायी है किन्तु सरकारी कर्मचारी अधिकारी आई ए एस या आई पी एस सीधे जनता के प्रति उत्तरदायी न होकर सरकार के प्रति उत्तरदायी होते है। यही कारण है कि राजनेताओ द्वारा किया गया भ्रष्टाचार अपराध अर्थात तीन नम्बर तथा सरकारी कर्मचारियों द्वारा किया गया भ्रष्टाचार गैर कानूनी अर्थात दो तक ही सीमित होता है अपराध नही। राजनेताओ को हम जो अधिकार देते है वह हमारी अमानता है किन्तु कर्मचारियो अधिकारियें को दिये गये अधिकार हमारी अमानत नहीं। राजनेता हमेशा ही भ्रम फैलाता है कि कर्मचारी अधिकारी दोषी है किन्तु यह बात सच नही ।

आपने भी कर्मचारियो के लिये बेइमान डरपोक नपुंसक जैसे शब्द लिखे जो अनावश्यक तथा संदर्भ हीन है क्योकि कर्मचारी अधिकारी कानूनो से बंधे होते है और कानून राजनेताओ से बंधे होते है ।सरकारी कर्मचारी अधिकारी के लिये राजनेताओ से टकराना आसान काम नही होता क्योकि जनता चाह कर भी कर्मचारियो की सहायता नही कर पाली किन्तु राजनेता चाहते ही उनका नुकसान कर सकते है । मै अच्छी तरह जानता हूॅ कि अनेक आई ए एस अपने प्रारंभिक काल मे पूरे तानाशाह होते ह और आधी उम्र के बाद पूरी तरह नेताओ के गुलाम हो जाते है क्योकि जल्दी ही उन्हे पता चल जाता है कि वे राजनेताओ के गैरकानूनी कार्यो मे सिर्फ बाधक मात्र हो सकते है उनका कोई नुकसान नही कर सकते जबकि वे इनका नुकसान कर सकते है । दूसरी बात है कि यदि राजनेताओ का भ्रष्टाचार पाप नही है तो कर्मचारियों का भ्रष्टाचार पाप कैसे होगा। इसलिये मेरा आपसे अनुरोध है कि आप राजनैतिक भ्रष्टाचार की तुलना कर्मचारियो के भ्रष्टाचार से न करे तो अच्छा होगा।

खबरे इस सप्ताह की 16/11 से 22 /11

इस सप्ताह एक महत्वपूर्ण घटना क्रम के अंतर्गत टू जी स्पेक्ट्रम की नीलामी का विवाद रहा। एक दो वर्ष पूर्व ही सी ए जी विनोद राय ने टू जी स्पेक्ट्रम के संबंध मे भाजपा सरकार की नीति को कांग्रेस सरकार द्वारा भी न बदलने से होने वाले संभावित नुकसान तथा इस नीति के क्रियान्वयन मे होने वाले भ्रष्टाचार को मिलाकर पौने दो लाख करोड के राष्ट्रीय नुकसान का आकलन किया था। अति उत्साही कपिल सिब्बल ने तथा अन्य कुछ मंत्रियो ने भी दबे छुपे सी ए जी के आकलन पर प्रश्न उठाये थे। सी ए जी द्वारा उठाये गये भ्रष्टाचार के प्रकरण तो पूरी तरह प्रमाणित भी हुए

और कई मंत्री जेल भी गये किनतु संभावित नुकसान का आकलन समाज मे हमेशा ही अविश्वसनीय रहा। नीलामी से देश को कई हजार करोड का लाभ होता यह सच है किन्तु बात को बतगड बनाने के फेर मे सी ए जी ने अनावश्यक उसे रबर की तरह बढाकर पौने दो लाख कर दिया था। कांग्रेस पार्टी की भारी बदनामी हुई किन्तु वह मन मसोस कर रह गई क्योकि एक ओर तो सी ए जी एक संवैधानिक संस्था है दूसरी ओर स्पेक्ट्रम नीलामी के भ्रष्टाचार के एक से बढकर एक मामले लगातार प्रमाणित हो रहे हैं।

सी ए जी का मन बढा हुआ था। उसने उसी तर्ज पर कोल ब्लाक नीलामी के भी पौने दो लाख के संभावित नुकसान का आकलन प्रकाशित कर दिया। उसी तरह एन डी ए सरकार की नीति न बदलने से रूकी नीलामी के अभाव तथा भ्रष्टाचार को मिलाकर आकलन। अब कांग्रेस पार्टी के लिये बरदाश्त करना कठिन हो गया। कांग्रेस पार्टी तथा सरकार ने मिलकर स्पेक्ट्रम नीलामी की ऐसी योजना बनाई कि पौने दो लाख करोड का दो हजार आठ की दर पर नुकसान का आकलन घटकर बीस तीस हजार करोड तक सिमट गया। क्योकि एक तिहाइ स्पेक्ट्रम नीलामी मे करीब दस हजार करोड ही रूपया प्राप्त हुआ । इस बीच सीएजी कार्यालय के ही वरिष्ठ अधिकारी सी पी सिंह जो उस समय उक्त पद पर थे, ने आरोप लगाकर सीएजी के साथ साथ मुरली मनोहर जोशी को भी कठघरे मे खडा कर दिया है। जोशी जी ने उक्त अधिकारी को गोपनीय तरीके से घर बुलाकर समझाया यह कानूनी रूप से सही होते हुए भी संदेह जनक तो है ही। भाजपा का यह कहना कि उक्त अधिकारी अब सरकार के दबाव मे झूठ बोल रहा है, पर्याप्त नही क्योकि यही आरोप तो विनोद राय पर भी है कि वे राजनैतिक स्वार्थ के लिये पद का दुरूपयोग कर रह है । कौन सच और कौन झूठ यह बात अब तक स्पष्ट नही है। अब जिस तरह सरकार और कांग्रेस पाटी सी ए जी पर हमले कर रही है और सी ए जी विनोद राय चुप है वह लोकतंत्र के लिये हानिकर है, जिसकी पहल विनोद राय जी ने पद का दुरूपयोग करते हुए की है। सी ए जी ने लीक से हटकर जो हिम्मत की वह प्रशंसनीय कार्य था किन्तु करने का तरीका गलत था। उन्हे चाहिये था कि वे टू जी या कोल आवटन मामले मे भ्रष्टाचार के नुकसान का अलग और नीलामी की नीति के कारण क्षति का अलग आकलन करते। नीतिगत नुकसान की प्रस्तुति उन्हे बहुत ही शालीन तरीके से प्रस्तुत करनी चाहिये थी न कि किसी आक्षेप के रूप मे।

मै पहले भी मानता था और अब भी मानता हूँ कि टू जी अथवा कोयला ब्लाक आंवटन मे नीलामी ही होनी चाहिये। सीएजी का उठाया हुआ मुद्दा बिल्कुल ठीक है किन्तु सी ए जी के अति उत्साह ने राजनेताओ को सामने खडे होने का अवसर दे दिया । सी ए जी द्वारा पद पर रहते हुए और अधिक अधिकारो की मांग करना तो और भी ज्यादा गलत काम था। किसी इकाई को रिटायर मेंट के बाद ऐसी सलाह देनी चाहिये तो प्रतिष्ठा बढती है और पदपर रहते हुए अधिकारो का रोना रोने से प्रतिष्ठा घटती है। अब भी सीएजी को मात्र झटका ही लगा है । यदि अब भी प्रत्यक्ष टकराव टालकर बिना किसी द्वेष भाव के हिम्मत से काम ले तो अच्छा होगा ।

इस सप्ताह एक दूसरी घटना शिवसेना प्रमुख बाल ठाकरे का निधन है । यदि स्वतंत्रता के बाद के भारतीय राजनैतिक वातावरण का आकलन करें तो बाल ठाकरे का कार्य मध्यम श्रेणी का माना जा सकता है अर्थात न तो गांधी विनोबा जयप्रकाश अन्ना हजारे विश्वनाथ प्रताप सिंह, अटल जी सरीखा और न ही लालू , मुलायम, राम बिलास पासवान, जयललिता, करूणानिधि, सिबू सोरेन, अजीत जोगी, ममता बनर्जी मायवती सरीखा। बाल ठाकरे का स्थान मनमोहन सिंह एन्टोनी शान्ताकुमार, रमण सिंह, शिवराज चौहान, पृथ्वीराज चहवाण, बुद्धदेव भट्टाचाय बाबूलाल मरांडी सरीखे लोगो के समकक्ष भी नहीं माना जा सकता किन्तु उनका कोई इतिहास कहीं कलंकित नही रहा। वे शेंर के समान जिये । अपनी बात स्पष्ट कही। उन पर किसी तरह का व्यक्तिगत या पारिवारिक भ्रष्टाचार का आरोप नही लगा। आज के राजनैतिक वातावरण मे कोई बाल ठाकरे सरीखा शक्ति और सम्मान प्राप्त व्यक्ति व्यक्तिगत या पारिवारिक भ्रष्टाचार से बच जाय यह विलक्षण ही बात है किन्तु न केवल बालठाकरे ही बल्कि अब तक तो दोनो सिंह वारिस उद्धव और राज भी ऐसे आरोपो से बचे हुए है।

बाल ठाकरे का एक दूसरा रूप भी है कि वे जीवन भर शेर के समाज जिये है, गाय के समान नही। वैसे तो उनके शेर के समान शौर्य की समीक्षा मे यह बात भी कही जाती है कि वे अपनो के बीच ही शेर थे दूसरो के बीच नही। बाल ठाकरे ने जीवन पर्यन्त बंबई के मध्य मे स्थित मुस्लिम बहुल भिन्डी बाजार मे सभा करने से स्वयं का दूर ही रखा । उन्होने नकली शंकराचार्यो को स्थापित करने मे भी बहुत भूमिका निभाई किन्तु मै इन सबकी चर्चा अभी समयोचित नही मानता। परिणाम स्वरूप मै उन्हे सफल शेर समझकर ही उनकी समीक्षा कर रहा हूँ।

गोरक्षा के लिये उन्होने बहुत मेहनत की किन्तु न कभी स्वयं को गाय कहा जाना पसंद किया न ही कभी उन्होने गाय के गुण अपने चरित्र में प्रवेश होने दिये। बाल ठाकरे ने अपने सम्पूर्ण जीवन काल मे समाज की कीमत पर अपने संगठन को मजबूत किया जो हिन्दुत्व की मौलिक अवधारणा क ही विरूद्ध है। हिन्दुत्व की अवधारणा रही है कि समाज राष्ट प्रदेश परिवार के बीच संतुलन होना चाहिये जिसका अर्थ है कि किसी भी नीचे वाली इकाई को उपर वाली इकाई को नुकसान करने से बचना चाहियें। बाल ठाकरे ने हिन्दुत्व की इस अवधारणा को नुकसान पहुंचाया। उन्होने समाज को कमजोर करके संगठित धर्म की अवधारणा को मजबूत किया। साथ ही उन्होने संगठित राष्ट्र को भी कमजोर करके संगठित महाराष्ट्र की राह पर आगे बढाया । इसके पूर्व अम्बेडकर जी अछूतो के नाम पर, दक्षिण भारत के कुछ नेता भाषा के नाम पर , कुछ सिख पृथक पंजाब के नाम पर संकीर्ण भावनाओं को उद्वेलित करके स्वयं को स्थापित करने का खेल सफलता पूर्वक खेलते और लाभ उठाते रहे है। संघ परिवार ने भी जीवन भर यही खेल खेला। बाला साहब ठाकरे ने भी स्वयं को स्थापित करने मे मराठी मानुष की संकीर्ण भावनाओ को उद्वेलित किया जो शेर क लिये तो उचित कहना संभव है किन्तु गाय के लिये नही। यही कारण है कि बाला साहब ठाकरे की समीक्षा करते समय दोनो ही स्वरूपो पर ध्यान देना आवश्यक है। उन्होने यदि स्पष्ट वक्ता तथा इमानदारी के रूप मे सम्मान जनक छवि के नायक के रूप मे याद किया जायगा तो दूसरी ओर समाज को राष्ट्र और राष्ट्र को महाराष्ट तक नोचे ले जाने के लिये एक खलनायक के रूप मे याद किया जायगा। आज भारत मे क्षेत्रीयता की जो भावना प्रबल हो रही है उसमे बाल ठाकरे का भी महत्वपूर्ण योगदान माना जाना चाहिये।

इस सप्ताह एक महत्वपूर्ण घटना क्रम के अन्तर्गत बाल ठाकरे के दाह संस्कार के बाद पालघाट बम्बई को दो मुसलमान लडकियों ने फेस बुक पर कुछ शब्द लिखकर उस दिन के बम्बई बन्द की आलोचना की। आलोचना बिल्कुल शालीन शब्दो मे थी। कोई अपमानजनक भाषा नहीं थी। शिवसैनिक ऐसी आलोचना बर्दाश्त नही कर सके। विरोध होते देख लडकियों ने फेस बुक से वे शब्द हटा लिये तथा लिखने के लिये क्षमा मांग ली किन्तु शिव सैनिको का गुस्सा शान्त नही हुआ । होता भी कैसे? बाला साहब के जाने के बाद उनके लिये अपनी स्वतंत्र हैसियत दिखाने का यह पहला ही तो अवसर था। जब सारे भारत का राजनैतिक ढांचा तथा मीडिया बाला साहब की मृत्यु पर आसू बहा रहा था तब इन दो बालिकाओं की, जो वैसे भी मुसलमान है, इतनी हिम्मत कि वे आंसू बहाना छोडकर अपनी वास्तविक भावना प्रकट कर दे। जब बडी बडी हस्तियां डर के मारे एक

पैर पर बाला साहब के सम्मान मे खडी हो तब भारत मे कोई मलाला बनने की हिम्मत करे तो न पाकिस्तान का तालिबान सहन कर सका न भारत का शिव सैनिक सहन करेंगा। तुरंत थाने मे रिर्पोट हुई, अपराध कायम हुआ, दोनो बच्चियों को थाने म बन्द किया गया और उसके चाचा के अस्पताल मे बहादुरी का प्रमाण प्रस्तुत करते हुए तोड फोड हुईं। ऐसे शोक के वातावरण मे जब परिवार का सदस्य दांह चिता पर जल रहा हो तब तोडफोड और बल प्रयोग प्रदर्शन शिवसैनिक ही कर सकते थे कोई वास्तविक हिन्दू तो ऐसे गमगीन वातावरण मे ऐसी बहादुरी नही दिखा सकता ।

दूसरे दिन हिन्दुत्व जगा । सम्पूर्ण भारत मे पुलिस, शिव सैनिक, सरकार के विरूद्ध आक्रोश पैदा हुआ। टीवी की बहस मे शिवसैनिक तो अलग थलग दिख ही रहे थे किन्तु भाजपा वाले भी बेशर्मी ही महसूस कर रहे थे। यहां तक कि सम्पूर्ण भारत मे एक स्वर से आवाज उठी कि भावनाए भडकने के नाम पर बनाये गये ऐसे कानून को ही समाप्त कर देना चाहिये जो अभिव्यक्ति की शालीन स्वतंत्रता को भी बरदाश्त न करना अपना अधिकार मानती हो। ऐसा कानून मुस्लिम देशो मे चलता है तो चले किन्तु भारत मे तो इसका कोई औचित्य नहीं है। कोई जेठ मलानी राम की शालीन आलोचना भी कर दे तो आपकी भावना भडक गई । कोई हजरत मुहम्मद के विषय मे कुछ बोल दे तो आपकी भावना भडक गई । भावना क्या हुई कि आपको गुण्डागर्दी करने का लाइसेंस मिल गया । यह तो गनीमत है कि आपने इन बच्चियों को छोड दिया अन्यथा आप इन्हे मलाला की तरह हलाला का भी मजा चखा सकते थे।

शिव सेना को समझना चाहिये कि अब बाल ठाकरे जीवित नही है। उनमे कुछ गुण भी ऐसे थे जो उन्हे बहुत बचाते थे। उनका परिवार भी संगठित था। उन्हे संघ परिवार का भी समर्थन था। अब वैसा वातावरण नही। अब तो अपनी योग्यता के ही भरोसे चलना होगा। गलत कदम हानिकर भी हो सकता है।

उन दोनो बच्चियो को भी सोचना चाहिये कि यदि हजरत मुहम्मद या कुरान के विषय मे कोई बात उठे और मुस्लिम भावना भडक जाय तो व मुसलमान भावना मे बहेगी, तटस्थ रहेंगी, अथवा उस रूप मे अभिव्यक्ति प्रस्तुत करेंगी जिस रूप मे भारत के अनेक हिन्दुओ ने उनके पक्ष मे आवाज उठाकर की है। प्रश्न बाल ठाकरे कुरान अथवा मुहम्मद साहब का नही है, प्रश्न है अभिव्यक्ति की आजादी और संतुलन कें बीच की सीमाओ का । अच्छा होगा कि हम हिन्दू मुसलमान की भावना से उपर उठकर मानवता की आजादी की दिशा मे आगे बढे और यदि इसके लिये भावना प्रधान कानूनो मे संशोधन भी करना पडे तो करें।